अनुवादक : डॉ. आफ़ताब अहमद
व्याख्याता, हिंदी-उर्दू, कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क

दुष्ट

मुश्ताक़ अहमद यूसुफ़ी

मिर्ज़ा करते वही हैं जो उनका जी चाहे। लेकिन उसके लिए तर्क अजीबो-ग़रीब लाते हैं। सही बात को ग़लत दलीलों से साबित करने की यह विलक्षण प्रतिभा दुर्लभ मनुष्यों ही के हिस्से में आती है। अब सिगरेट ही को लीजिए। हमें किसी के सिगरेट न पीने पर कोई आपत्ति नहीं, लेकिन मिर्ज़ा सिगरेट छोड़ने का जो दार्शनिक औचित्य पेश करते हैं वह आम आदमी के दिमाग़ में बिना ऑपरेशन के नहीं घुस सकता।

महीनों वे यह ज़ेहननशीन कराते रहे कि सिगरेट पीने से घरेलू समस्याओं पर सोच-विचार करने में मदद मिलती है और जब हमने अपने हालात और उनकी हुज्जत से क़ायल होकर सिगरेट शुरू करदी और इसके आदी हो गए तो उन्होंने छोड़ दी। कहने लगे कि बात यह है कि घरेलू बजट की जिन समस्याओं पर मैं सिगरेट पी-पीकर विचार किया करता था वे दरअसल पैदा ही सिगरेट-नोशी की ज़्यादती से हुई थीं।

हमें सोच-विचार की लत लगाने के बाद उन्होंने आना-जाना बंद कर दिया जो इस बात का लक्षण था कि उन्होंने वाक़ई तौबा कर ली है और किसी से मिलना-जुलना पसंद नहीं करते, ख़ास तौर पर सिगरेट पीने वालों से। (उन्हीं का क़ौल है कि बढ़िया सिगरेट पीते ही हर व्यक्ति को माफ़ कर देने को जी चाहता है------चाहे वह रिश्तेदार ही क्यों न हो।) मैं गया भी तो खिंचे-खिंचे रहे और चंद दिन बाद एक साझा दोस्त के द्वारा कहलवाया "अगर मैंने मजबूरीवश सिगरेट न पीने की क़सम खा ली थी तो आपसे इतना भी न हुआ कि ज़बरदस्ती पिला देते। मैं हूँ मजबूर मगर आप तो मजबूर नहीं।"

सात महीने तक सिगरेट और सोसायटी से परहेज़ किया। लेकिन ख़ुदा कुछ न कुछ सबब पैदा कर ही देता है। आख़िर एक दिन जब वे उपदेश सुनकर ख़ुश-ख़ुश घर लौट रहे थे तो उन्हें बस में एक सिगरेट लाइटर पड़ा मिल गया। चुनांचे पहले ही बस-स्टॉप पर उतर पड़े और लपककर गोल्ड-फ़्लैक सिगरेट का डिब्बा ख़रीदा। (हमें इस बात पर बिल्कुल आश्चर्य नहीं हुआ। इसलिए कि पिछले क्रिसमस पर उन्हें कहीं से नायलॉन के मोज़े चार आने रियायत से मिल गए थे, जिनको "मैच" करने के लिए उन्हें एक दोस्त से क़र्ज़ लेकर पूरा सूट सिलवाना पड़ा) सिगरेट अपने जलते हुए होंठों में दबाकर लाइटर जलाना चाहा तो मालूम हुआ कि अन्दर के तमाम पुर्ज़े ग़ायब हैं। अब माचिस ख़रीदने के सिवा कोई चारा न रहा।

मैंने अक्सर यही देखा कि मिर्ज़ा पैग़म्बरी लेने को गए और आग लेकर लौटे!

और दूसरे दिन अचानक ग़रीबख़ाने पर गाढ़े-गाढ़े धुएँ के बादल छा गए, जिनमें से मिर्ज़ा का मुस्कुराता हुआ मुखड़ा धीरे-धीरे उदय हुआ। गिले-शिकवे दूर हुए तो नथुनों से धुआँ ख़ारिज करते हुए ख़ुशख़बरी दी कि सिगरेट मेरे लिए आनंददायक नहीं, मुक्तिदायक है।

इतना कहकर उन्होंने चुटकी बजाके अपने मुक्तिदाता की राख झाड़ी और किसी क़दर तफ़सील से बताने लगे कि सिगरेट न पीने से याददाश्त का यह हाल हो गया था कि एक रात पुलिस ने बग़ैर बत्ती के साइकिल चलाते हुए पकड़ लिया तो अपना सही नाम और वल्दियत तक न बता सका, और अल्हम्दुलिल्लाह अब यह हाल है कि एक ही दिन में आधी टेलिफ़ोन डायरेक्टरी याद हो गई।

मुझे लाजवाब होता देखकर उन्होंने फ़ातिहाना अंदाज़ से दूसरी सिगरेट सुलगाई। माचिस एहतियात से बुझाकर होंठों में दबा ली और सिगरेट ऐश-ट्रे में फेंक दी।

कभी वे इस ख़ुशी में सिगरेट पीते मिलेंगे कि आज रमी में जीतकर उठे हैं और कभी (बल्कि अक्सरो-बेशतर) इस वजह से कि आज तो बिल्कुल खुक्ख हो गए। उनका दूसरा दावा स्वीकार कर लिया जाए कि सिगरेट से ग़म ग़लत होता है तो उनके ग़मों की सामूहिक संख्या, पचास ग़म प्रतिदिन की दर से, अट्ठारह हज़ार सालाना के लगभग होगी और कुछ ग़म तो इतने ज़िद्दी होते जा रहे हैं कि जब तक तीन-चार सिगरेटों की धूनी न दी जाए टलने का नाम नहीं लेते। उन्हें इबरत[1] दिलाने के इरादे से मैंने राजा मिथ्रिदातेस छठे की कथा सुनाई, जो यूँ है कि जब उसको हर समय यह आशंका रहने लगी कि मौक़ा पाकर कोई दुश्मन उसे ज़हर खिला देगा तो उसने ख़ुद ही रोज़ाना थोड़ा-थोड़ा ज़हर खाना शुरू कर दिया ताकि ख़ून और अंग आदी हो जाएँ और वह इस एहतियाती उपाय में इस हद तक सफल हुआ कि जब हालात से मजबूर होकर उसने वाक़ई आत्महत्या करने की कोशिश की तो ज़हर बिल्कुल बेअसर साबित हुआ और वह बड़ी मुश्किल से अपने एक दास को ख़ंजर घोंपने पर राज़ी कर सका।

बोले "नाहक़ बेचारे दास से पाप करवाया। अगर आत्महत्या ही करनी थी तो ज़हर खाना बंद कर देता। चंद ही घंटों में तड़प-तड़पकर मर जाता।"

लेकिन जो मित्रगण उनके स्वभाव के उतार-चढ़ाव से परिचित हैं वे जानते हैं कि उनके ये ग़म सर्वकालिक व सार्वभौमिक होते हैं जिनका सिगरेट तो दरकिनार हुक़्क़े से भी इलाज नहीं हो सकता। मैंने अक्सर उन्हें इस ग़म में सिगरेट के कश पर कश लगाते देखा है कि सोई गैस का भण्डार सौ साल में ख़त्म हो गया तो उनकी अपनी नौकरी का क्या होगा? या एक लाख साल बाद आदमी के सिर पर बाल न होंगे तो हज्जामों और सिखों का क्या अंजाम होगा? और जब सूरज पचास अरब साल बाद बिल्कुल ठंडा पड़ जाएगा तो हम घुप अँधेरे में सुबह का अख़बार कैसे पढ़ेंगे?

---

[1] इबरत दिलाना: सज़ा के द्वारा या किसी दुर्घटना और कष्टप्रद बात को दिखा-सुनाकर सबक़ सिखाना और नसीहत व चेतावनी देना। (अनु.)

एक दफ़ा तो सबको यक़ीन हो गया कि मिर्ज़ा ने वाक़ई सिगरेट छोड़ दी। इसलिए कि मुफ़्त की भी नहीं पीते थे और एक-एक से कहते फिरते थे कि अब तो भूले से भी सिगरेट का ख़याल नहीं आता। बल्कि रोज़ाना सपने में भी सिगरेट बुझी हुई ही नज़र आती है। मैंने पुछा अब की दफ़ा क्यों छोड़ दी?

हवा में फूँक से फ़र्ज़ी धुएँ के गोले बनाते हुए बोले "यूँही बैठे-बैठे ख़याल आया कि जो रूपया सिगरेट में फूँक रहा हूँ, उससे अपना जीवन-बीमा कराया जा सकता है। किसी बेवा की मदद हो सकती है।"

"मिर्ज़ा,! बीमे में कोई हर्ज नहीं। लेकिन जब तक नाम, पता मालूम न हो, यह बेवा वाली बात हमारी समझ में नहीं आएगी।"

"फिर यूँ समझ लो कि बीमे से अपनी ही बेवा की मदद हो सकती है। लेकिन मज़ाक़ की बात छोड़ें, सिगरेट छोड़ने में है बड़ी बचत! जो सिर्फ़ इस तरह मुमकिन है कि जब भी पीने का जी चाहे, यह फ़र्ज़ कर लो कि पी ली। इस तरह हर बार तुम्हारा डेढ़ आना बच जाएगा।"

मैंने देखा कि इस फ़ॉर्मूले से मिर्ज़ा ने अक्सर एक दिन में दस-दस पंद्रह-पंद्रह रूपये बचाए। एक रोज़ दस रूपये की बचत दिखाकर उन्होंने मुझसे पाँच रूपये उधार माँगे तो मैंने कहा "ग़ज़ब है! दिन में दस रूपये बचाने के बावजूद मुझसे पाँच रूपये क़र्ज़ माँग रहे हो?"

कहने लगे "अगर यह न बचाता तो इस समय तुम्हें पंद्रह रूपये देने पड़ते।"

मुझे इस सूरतेहाल में सरासर अपना ही फ़ायदा नज़र आया। लिहाज़ा जब भी पाँच रूपये क़र्ज़ दिए यह समझकर दिए कि उल्टा मुझे दस रूपये नक़द का मुनाफ़ा हो रहा है। मिर्ज़ा की मुसलसल मदद की बदौलत मैंने इस तरह दो साल की छोटी सी मुद्दत में उनसे छह सौ रूपये कमा लिए।

फिर एक सुहानी सुबह को देखा कि मिर्ज़ा दाएँ-बाएँ धुएँ की कुल्लियाँ करते चले आ रहे हैं। मैंने कहा "हाँय मिर्ज़ा! यह क्या बदपरहेज़ी है?"

जवाब दिया "जिन दिनों सिगरेट पीता था किसी अल्लाह के बन्दे ने उलटकर न पूछा कि मियाँ क्यों पीते हो? लेकिन जिस दिन से छोड़ी, जिसे देखो यही पूछता है कि ख़ैर तो है क्यों छोड़ दी? आख़िरकार तंग आकर मैंने फिर शुरू कर दी! भला यह भी कोई तुक है कि जानबूझकर क़त्ल करने का कारण समझने के लिए आप मुजरिमों से बिल्कुल नहीं पूछते कि तुम लोग क़त्ल क्यों करते हो? और हर राहगीर की राह रोक-रोककर पूछते हैं कि सच बताओ तुम क़त्ल क्यों नहीं करते?"

मैनें समझाया "मिर्ज़ा! अब पैमाने बदल गए हैं। मिसाल के तौर पर दाढ़ी को ही लो।"

उलझ पड़े "दाढ़ी का क़त्ल से क्या ताल्लुक़?"

"ख़ुदा के बन्दे! पूरी बात तो सुनी होती। मैं कह यह रहा था कि पिछले ज़माने में कोई आदमी दाढ़ी नहीं रखता था तो लोग पूछते थे कि क्यों नहीं रखते? लेकिन अब कोई दाढ़ी रखता है तो सब पूछते हैं कि क्यों रखते हो?"

उनका दावा है कि निकोटीन उनके ख़ून में इस हद तक घुल गई है कि हर सुबह पलंग की चादर झाड़ते हैं तो सैंकड़ों खटमल गिरते हैं। यक़ीनन ये निकोटीन ही के असर से अपने बुरे अंजाम को पहुँचते होंगे। वर्ना

अव्वल तो यह नासमझ प्रजाति इतनी बड़ी संख्या में संगठित होकर आत्महत्या करने की क्षमता नहीं रखती। दूसरे, आज तक सिवाय मनुष्य के किसी जानदार ने अपने भविष्य से निराश होकर आत्महत्या नहीं की। अलबत्ता यह मुमकिन है कि मिर्ज़ा अपने खून को ख़राब साबित करने में कुछ अतिश्योक्ति करते हों। लेकिन इतना तो हमने अपनी आँखों से देखा कि वे सिगरेट के धुएँ के इस क़दर आदी हो चुके हैं कि साफ़ हवा से खाँसी उठने लगती है और अगर दो-तीन दिन तक सिगरेट न मिले तो गले में ख़राश हो जाती है।

हमने जब से होश संभाला (और हमने मिर्ज़ा से बहुत पहले होश संभाला) मिर्ज़ा के मुँह में सिगरेट ही देखी। एक बार हमने सवाल किया कि तुम्हें यह शौक़ किसने लगाया तो उन्होंने चुटकले दाग़ने शुरू कर दिए।

"अल्लाह बख़्शे वालिद मरहूम (स्वर्गीय) कहा करते थे कि बच्चों को सिगरेट नहीं पीनी चाहिए------ इससे आग लगने का अंदेशा रहता है। इसके बावजूद हम पीते रहे। काफ़ी समय तक घर वालों को यही ग़लतफ़हमी रही कि हम सिर्फ़ बुज़ुर्गों को चिढ़ाने के लिए सिगरेट पीते हैं।"

"मगर मैंने पूछा था यह चस्का किसने लगाया?"

"मैंने सिगरेट पीना अपने बड़े भाई से सीखा जबकि उनकी उम्र चार साल थी।"

"इस रफ़्तार से उन्हें अब तक क़ब्र में होना चाहिए।"

"वे वहीं हैं!"

इसके बावजूद मिर्ज़ा किसी तरह यह मानने को तैयार नहीं कि वे आदतन सिगरेट पीते हैं। इस मसले पर जब भी बहस हुई, उन्होंने यही साबित करने की कोशिश की कि वे सिगरेट किसी गंभीर फ़लसफ़े के सम्मान में या सिर्फ़ खुदा के बन्दों की भलाई के लिए पी रहे हैं-------अनिच्छापूर्वक। कोई तीन बरस उधर की बात है कि होते-होते मुझ तक यह ख़बर पहुँची कि मिर्ज़ा ने फिर तौबा कर ली और पूरे छत्तीस घंटे से एक सिगरेट नहीं पी। भागम-भाग बधाई देने पहुँचा तो नक़्शा ही और पाया। देखा कि बधाई देने वालों का एक मजमा रात से उनके यहाँ पड़ाव डाले पड़ा है। आवभगत हो रही है। मिर्ज़ा उन्हें सिगरेट पिला रहे हैं और वे मिर्ज़ा को। मिर्ज़ा माचिस की डिबिया पर हर एक जुमले के बाद दो उँगलियों से ताल देते हुए कह रहे थे:

"अल्हम्दुलिल्लाह (ताल) मैं जुआ नहीं खेलता (ताल) शराब नहीं पीता (ताल) ऐयाशी नहीं करता (ताल) अब सिगरेट भी न पियूँ तो यह खुदा की नेमतों की बड़ी नाशुक्री होगी।" (तीन ताल)

मैंने कहा "लाहौल व ला क़ूवत! फिर यह लत लगा ली?"

मजमे की तरफ़ दोनों हाथ फैलाकर फ़रमाया "यारो! तुम गवाह रहना कि अब की बार सिर्फ़ अपने सुधार के लिए तौबा तोड़ी है। बात यह है कि आदमी कोई छोटी-मोटी लत पाल ले तो बहुत सी बड़ी लतों से बचा रहता है। ये कमज़ोरियाँ (MINOR VICES) इंसान को बड़े गुनाहों से रोकती हैं। और याद रखो कि बुद्धिमान वही है जो तनिक सी मेहनत करके अपने चरित्र में कोई ऐसा खुला दोष पैदा कर ले जो उसके असल दोषों को ढाँप ले।"

"अपने पल्ले कुछ नहीं पड़ रहा।"

अपने दोष-आच्छादक का पैकेट मेरी तरफ़ बढ़ाते हुए बोले "यह पियोगे तो खुदबखुद समझ में आ जाएगा। इस दर्शन में कोई एच-पेच नहीं। तुमने देखा होगा। अगर कोई आदमी सौभाग्य से गंजा, लंगड़ा या काना है तो उसका यह सतही दोष लोगों का ध्यान इस क़दर आकर्षित कर लेता है कि असल दोषों की ओर किसी की दृष्टि नहीं जाती। मिसाल में जूलियस सीज़र, तैमूर लंग और रंजीत सिंह को पेश किया जा सकता है। वैसे भी किसी सौ प्रतिशत शीलवान आदमी से मिलकर किसी का जी खुश नहीं होता। तुम जानते हो कि मैं आवारा और बदचलन नहीं, ऐयाश और लम्पट नहीं, हरजाई और हरीचुग नहीं। लेकिन आज भी (यहाँ मिर्ज़ा ने बहुत सा लज़ीज़ धुआँ छोड़ा)-----लेकिन आज भी किसी सुन्दर स्त्री के बारे में यह सुनता हूँ कि वह शीलवान भी है तो न जाने क्यों दिल बैठ सा जाता है।"

"मिर्ज़ा सिगरेट सभी पीते हैं मगर तुम इस अंदाज़ से पीते हो जैसे बदचलनी कर रहे हो!"

"किसी अच्छे भले काम को बुरा समझकर किया जाए तो उसमें लज्ज़त पैदा हो जाती है। यूरोप इस गुर को अभी नहीं समझ पाया। वहाँ शराबनोशी बुराई नहीं। इसी लिए उसमें वह मज़ा नहीं आता।"

"मगर शराब तो वाक़ई बुरी चीज़ है! अलबत्ता सिगरेट पीना बुरी बात नहीं।"

"साहब! चार सिगरेट पहले यही बात मैंने इन लोगों से कही थी। बहरहाल, मैं तो यह मानने के लिए भी तैयार हूँ कि सिगरेट पीना गुनाह-ए-सगीरा[1] है। मगर ग़ुस्सा मुझे उन बेवकूफ़ों पर आता है जो समझते हैं कि सिगरेट न पीना सवाब (पुण्य) का काम है। माना की झूठ बोलना और चोरी करना बुरी बात है। लेकिन मुसीबत यह है कि हमारे यहाँ लोग यह उम्मीद रखते हैं कि सरकार उनको हर बार सच बोलने और चोरी न करने पर स्वर्ण-पदक देगी।"

फिर एक ज़माना ऐसा आया कि मिर्ज़ा सारे दिन लगातार सिगरेट पीते मगर माचिस सिर्फ़ सुबह जलाते थे। गिनती याद नहीं। लेकिन उनका अपना कहना है कि आजकल एक दिन में बीस फ़ीट सिगरेट पी जाता हूँ और वह भी इस सूरत में कि सिगरेट आम तौर पर उस समय तक नहीं फेंकते, जब तक इंसानी खाल के जलने की चिरांद न आने लगे। आख़िर एक दिन मुझसे सब्र न हो सका और मैंने आँखों में आँखें डालकर कहा कि मिर्ज़ा! आख़िर क्या ठानी है?

मेरी आँखों में धुआँ छोड़ते हुए बोले " क्या करूँ, यह दुष्ट नहीं मानता।" मिर्ज़ा अपने *नफ़्स-ए-अम्मारा*[2] को (जिसका सही स्थान उनके निकट गर्दन के दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र में है) अक्सर इसी नाम से याद करते, चुम्कारते और ललकारते हैं।

मैंने कहा "फ़्रायड के सिद्धांत के अनुसार सिगरेट पीना प्रतिगमन है और एक बचकाना हरकत है। यौन-तृप्ति से वंचित व्यक्ति सिगरेट के सिरे को अचेतन मन में NIPPLE का विकल्प समझते हैं।"

"मगर फ़्रायड तो मानव मस्तिष्क को नाभि का परिशिष्ट समझता है!"

---

[1] गुनाह-ए-सगीराः छोटा गुनाह, जिसको आसानी से माफ़ कर दिया जाएगा। (अनु.)

[2] नफ़्स-ए-अम्माराः मन की वह वृत्ति जो आदमी को बुराई, पाप या व्यभिचार की ओर ले जाती है। (अनु.)

"गोली मारो फ़्रायड को! ख़ुदा के बन्दे! अपने आप पर रहम नहीं आता तो कम-से-कम उस छोटी सी बीमा कंपनी पर तरस खाओ जिसकी पालिसी तुमने ली है। नई-नई कंपनी है। तुम्हारी मौत की ताब नहीं ला सकती। फ़ौरन दिवालिया हो जाएगी।"

"आदमी अगर समय से पहले न मर सके तो बीमे का मक़सद ही मर जाता है।"

"मिर्ज़ा! बात को मज़ाक़ में न उड़ाओ। अपनी सेहत को देखो। पढ़े-लिखे आदमी हो। अख़बार और पत्रिकाएँ सिगरेट की बुराई में रंगी पड़ी हैं।"

"मैं ख़ुद सिगरेट और कैंसर के बारे में इतना कुछ पढ़ चुका हूँ कि अब पढ़ने से नफ़रत हो गई!" उन्होंने चुटकला दोहराया।

इस मद में बचत के जो विभिन्न रूप हो सकते हैं, उनमें से एक यह भी है कि मिर्ज़ा सारे दिन माँग-तांग कर सिगरेट पीते हैं। (माचिस वे उसूलन अपनी ही इस्तेमाल करते हैं। कहते हैं कि माचिस माँगना बड़ी बेइज़्ज़ती की बात है। कठिन समय में रसीद लिखकर किसी से सौ दो सौ रूपये लेने में शर्म की बात नहीं होती। लेकिन रसीद का टिकट भी उसी से माँगना क़र्जदारी की शान के ख़िलाफ़ है।) दूसरी सूरत यह होती है कि वे ऐसी मार्का की सिगरेटों पर उतर आते हैं जिनको वे पैकेट के बजाय सिगरेट केस में रखना और उलटी तरफ़ से जलाना ज़रूरी समझते हैं।

लेकिन नौ दस माह पहले जब दुष्ट इस तरह भी न माना तो मिर्ज़ा ने तीसरा और आख़िरी हथियार इस्तेमाल किया। यानी सिगार पीना शुरू कर दिया जो उनके हाथ में छड़ी और मुँह में बाँसुरी मालूम होता था। पीने, बल्कि न पीने, का अंदाज़ यह था कि डरते-डरते दो-तीन ऊपरी कश लेकर एहतियात से बुझा देते और एक डेढ़ घंटे बाद होश बहाल होने पर फिर जला लेते। उनकी अवधारणा है कि इस तरह पीने से तलब भी मिट जाती है और सिगार की उम्र बढ़ जाती है सो अलग--------(यहाँ इतना और निवेदन कर दूँ तो अनुचित न होगा कि उन्होंने अपनी जवानी को भी इसी तरह सेंत-सेंतकर रखना चाहा, इसलिए समय से पहले बूढ़े हो गए)। चुनांचे एक ही सिगार को दिन भर "ऑफ़" और "ऑन" करते रहते। फिर चिराग़-जले इसी को टेकते हुए कॉफ़ी हाउस पहुँच जाते। जनता जनार्दन उनको पीठ-पीछे क्या कहती है, इसपर उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया। लेकिन एक दिन धुआँ मुँह का मुँह में रह गया, जब उन्हें अचानक यह पता चला कि उनका जलता-बुझता सिगार अब एक सामजिक वर्ग का प्रतीक (सिंबल) बन चुका है। हुआ यह कि कॉफ़ी हाउस के एक धुंधले कोने में आग़ा अब्दुल अलीम 'जाम' मुँह लटकाए बैठे थे। मिर्ज़ा कहीं पूछ बैठे कि आग़ा आज बुझे-बुझे से क्यों हो? आग़ा ने अपने कुशल-मंगल और अन्य हालात से यूँ अवगत कराया:

शाम ही से बुझा सा रहता है दिल हुआ है सिगार मुफ़लिस का[1]

---

[1] पैरोडी: शाम ही से बुझा सा रहता है दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस का (मीर तक़ी 'मीर')

एक ऐसी ही उदास शाम की बात है। मिर्ज़ा कॉफ़ी हाउस में दुष्ट से बड़ी बेजिगरी से लड़ रहे थे और सिगार के यूँ कश लगा रहे थे जैसे किसी राक्षस का दम निकाल रहे हैं। मैंने दिल बढ़ाने को कहा "तुमने बहुत अच्छा किया कि सिगरेट का ख़र्च कम कर दिया। रूपये के मूल्य में दिन-बदिन गिरावट आ रही है। दूरदर्शिता का तक़ाज़ा है ख़र्च कम करो और बचाओ ज़्यादा।"

सिगार को सपेरे की पोंगी की तरह धौंकते हुए बोले "मैं भी यही सोच रहा था कि आजकल एक आने में एक समूची सिगरेट मिल जाती है। दस साल बाद आधी मिलेगी!"

मैंने बात आगे बढ़ाई। लेकिन हम यही एक आना आज बचाकर रख लें तो दस साल बाद सूद समेत दो आने हो जाएँगे।"

"और उस दुअन्नी से हम समूची सिगरेट ख़रीद सकेंगे जो आज सिर्फ़ एक आने में मिल जाती है!"

जुमला पूरा होते ही मिर्ज़ा ने अपनी जलती हुई छड़ी ज़मीन पर दे मारी। कुछ पल बाद जब धुएँ के बादल छटे तो मिर्ज़ा के इशारे पर एक बैरा प्लेट में सिगरेट लिए प्रकट हुआ और मिर्ज़ा एक आने में दो आने का मज़ा लूटने लगे,

सिगरेट शुरू किये अभी तीन हफ़्ते भी न गुज़रे होंगे कि किसी ने मिर्ज़ा को पट्टी पढ़ा दी कि सिगरेट छोड़ना चाहते हो तो हुक़्क़ा शुरू कर दो। उनके लिए यह होमियोपैथिक मशवरा कुछ ऐसा नया भी न था। क्योंकि होमियोपैथी का बुनियादी सिद्धांत यह है कि छोटा मर्ज़ दूर करने के लिए कोई बड़ा मर्ज़ खड़ा करदो। इसलिए अगर मरीज़ ज़ुकाम की शिकायत करे तो दवा से निमोनिया के लक्षण पैदा करदो। फिर मरीज़ ज़ुकाम की शिकायत नहीं करेगा। होमियोपैथी की करेगा!

बहरहाल, मिर्ज़ा ने हुक़्क़ा शुरू कर दिया। और वह भी इस बंदोबस्त से कि घंटों पहले पीतल से मंढी हुई चिलम और नक़्क़ाशीदार पेंदी, नीबू और कपड़े से इतनी रगड़ी जाती कि जगर-जगर करने लगती। नेचा (नली) गुलाब जल में तर किया जाता। बाँस की नली (नै) पर मोतिया के हार लपेटे जाते। मुँहनाल क्योड़े में बसाई जाती। एक हुक़्क़ा भी क़ज़ा (नाग़ा) हो जाता तो हफ़्तों इसका अफ़सोस करते रहते। बंधा हुआ मामूल था कि पीने से पहले चार-पाँच मिनट तक तम्बाकू की तारीफ़ करते और पीने के बाद घंटों "डेटॉल" से कुल्लियाँ करते। अक्सर देखा कि हुक़्क़ा पीते जाते और खाँसते जाते और खाँसी के संक्षिप्त अंतराल में सिगरेट की बुराई करते जाते। फ़रमाते थे कि किसी ज्ञानी ने सिगरेट की क्या ख़ूब परिभाषा दी है------एक ऐसा सुलगने वाला दुर्गन्धपूर्ण पदार्थ जिसके एक सिरे पर आग और दूसरे सिरे पर मूर्ख होता है। लेकिन पूरबी हुक़्क़े में इस बात का ख़ास ख़याल रखा जाता है कि कम-से-कम जगह घेरकर तम्बाकू को ज़्यादा-से-ज़्यादा फ़ासले पर कर दिया जाए।"

मैंने कहा " यह सब दुरुस्त! मगर *इसका पीना और पिलाना दर्दे-सर यह भी तो है*[1]।
इससे बेहतर तो पाइप रहेगा। तेज़ भी है और सस्ता का सस्ता।"

---

[1] (पैरोडी) दर्दे-सर में है किसे संदल लगाने का दिमाग़ // इसका घिसना और लगाना दर्दे-सर यह भी तो है
एक और शेर यूँ है: दर्दे-सर के वास्ते संदल बताते हैं हकीम // इसका घिसना और लगाना दर्दे-सर यह भी तो है

चिलम के अंगारों को दहकाते हुए बोले "भाई! उसको भी आज़मा चुका हूँ। तुम्हें शायद मालूम नहीं कि पाइप में तम्बाकू से ज़्यादा माचिस का ख़र्च बैठता है वर्ना यह बात हरगिज़ न कहते। दो महीने पहले एक इंग्लिश पाइप ख़रीद लाया था। पहले ही रोज़ बासी मुँह एक घूँट लिया तो पेट में एक अलौकिक घूँसा सा लगा। आँख मीचकर दो-चार घूँट और लिए तो बाक़ायदा बॉक्सिंग होने लगी। अब उस पाइप से बच्चियाँ अपनी गुड़ियों की शादी में शहनाई बजाती हैं।

(चिराग़ तले)